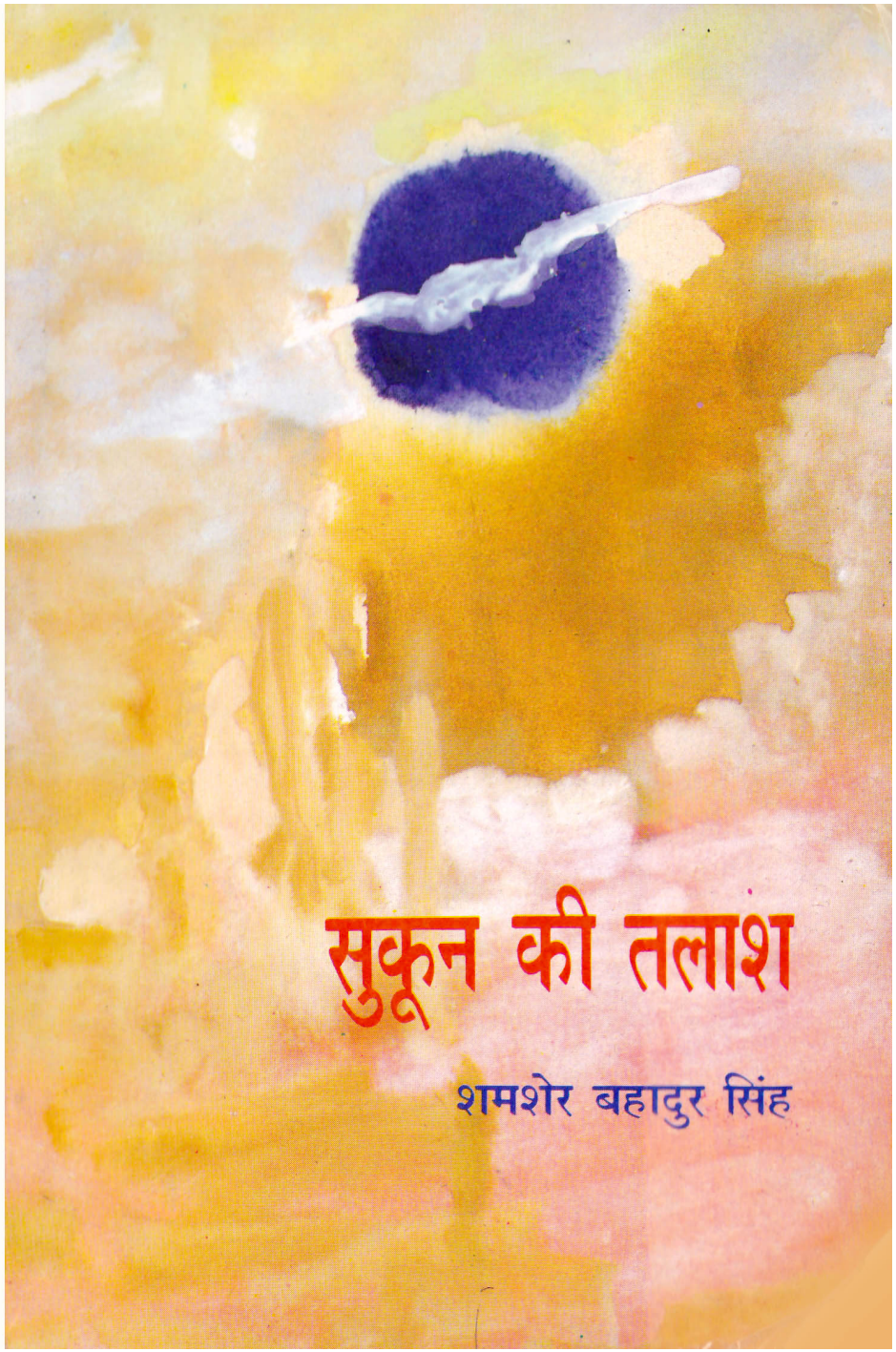

सुकून की तलाश

शमशेर बहादुर सिंह

वाणी प्रकाशन
नयी दिल्ली-110002
फोन : 3273167, 3275710 • फैक्स : 3275710
e-mail : vani_prakashan@yahoo.com
vani_prakashan@mantraonline.com

सुकून की तलाश

शमशेर बहादुर सिंह

संपादक

रंजना अरगड़े

ISBN 81-7055-564-7

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
द्वारा प्रकाशित

प्रथम संस्करण : 1998
© रंजना अरगड़े
आवरण : गोबिन्द प्रसाद

कम्प्यूटेक सिस्टम, दिल्ली-110093
द्वारा लेज़र कंपोज

सुधा आफसेट प्रेस, दिल्ली-110092
में मुद्रित

मूल्य : 30.00 रुपये

SUKOON KI TALAASH
by Shamsher Bahadur Singh
Edited by Ranjana Argade

और यह क़ीमती सरमाया…

"कबूतरों ने एक ग़ज़ल गुनगुनाई/मैं समझ न सका रदीफ़-क़ाफ़िए
क्या थे/इतना ख़फ़ीफ़ इतना हल्का इतना मीठा/उनका दर्द था/"

शमशेरजी की काव्यात्मक आयडेंटिटीवाली जो चंद पंक्तियाँ हैं—उनमें से सबसे ज़्यादा अगर उनके साथ कोई पंक्ति जोड़ी जाती है या जिससे शमशेरजी को याद किया जाता है तो वे यही पंक्तियाँ हैं। सचमुच शमशेरजी को पढ़ने पर ऐसा विचार एकबारगी हमें आता है कि यह कवि अगर हिन्दी में नहीं लिखता तो अवश्य ही उर्दू का शायर होता। बचपन की परवरिश, उर्दू की साहित्यिक परम्परा से बहुत पहले से रचनात्मक जुड़ाव, खड़ीबोली के उस इलाक़े से सम्बन्ध जहाँ सहज बोलचाल में उर्दू शामिल हो—ये सारी बातें इसी ओर इशारा है।

ऐसे में अगर यह विचार आए उनके काव्य-प्रेमियों को कि क्यों न उनकी उर्दू असरातवाली चीज़ें एक साथ कहीं संकलित हों तो आश्चर्य क्या ? वैसे ये तो हम हैं कि भेद करते हैं कि ये उर्दू, ये हिन्दी—पर शमशेरजी तो कहते हैं कि :

"वो अपनों की बातें, वो अपनों को खू-बू/
हमारी ही हिन्दी हमारी ही उर्दू"

वो तो कहते हैं—"हमारे सिवा इनका रस कौन जाने ?" एक कलाकार ही प्रेम-रस का भाव जान सकता है।

कबीर सम्मान स्वीकारते समय जब उन्होंने अपनी रचनाओं का पाठ किया था, तब ग़ज़ल सुनाने से पहले उन्होंने यह कहा था कि "ग़ज़ल कहना मेरे लिए बहुत मुश्किल है। मैं सहसा यूँ ही ग़ज़लें कहने की सोच नहीं सकता।" मैं सोच रही थी कि ऐसा क्यों ? लोग तो धड़ल्ले से ग़ज़ल मार ग़ज़ल लिखते चले जा रहे हैं, तब शमशेरजी जैसे कवि के लिए यह कठिन क्यों ? इस संकलन में आप पाएँगे कि ग़ज़लों के संकलन के बाद 'कुछ शेर' संकलित हैं, जिसमें चार शेर, पाँच शेर

अनुक्रम

ग़ज़लें **12-45**

चुपके से कोई कहता है 13
अपने दिल का हाल यारो 14
फिर किसी को 16
ईमान गड़बड़ी में है 17
यहाँ कुछ रहा हो 18
'आए भी वो गए भी वो' 19
फिर निगाहों ने तेरी 21
मैं आपसे कहने को ही था 22
बहुत काम बाक़ी है 24
कहो तो क्या न कहें 26
ये कैसे कवि का बग़ीचा है 28
जहाँ में अब तो जितने रोज़ 29
वो दुश्मन मेरा इतना अच्छा 31
राह तो एक थी हम दोनों की 33
उलट गये सारे पैमाने 35
भूला हुआ था आज तलक 37
कहता है बाज़ुओं का ज़ोर 38
वही उम्र का एक पल कोई लाए 39
अंदाज़ा ही बहक न गया था 40
मैं गया आप क्यों हुए मग़मूम 41
ये शोख़ चाल तेरी काफ़िराना 43
बन्दगी इक मुक़ाम था 45

रूबाई व क़िता **47-60**

हम अपने ख़याल को 49
यह मन इस लोक में 50
था बहती सदफ़ में बन्द 51
वह काम मुरादाबाद में हम कर आए 52

राष्ट्रीय स्वतन्त्रता-दिवस पूर्व की ईद 53
यह काम नहीं है कामचोरी है महज़ 54
हैं आसमाने-हिन्द के तारे दोनों 55
बनियों ने समाजवाद को जोखा है 56
कितना ज़लज़ला कितना तूफ़ान आया 57
आप भी किस हवा में हैं शमशेर 58
जगह-जगह तेरी बातें थीं 60

नज़्में **61-100**

गजानन माधव मुक्तिबोध 63
स्व. भारतभूषण अग्रवाल 65
ईरान और अफ़गानिस्तान 68
मुझको मिलते हैं अदीब 70
धार्मिक दंगों की राजनीति 71
हमारे सिवा इसका रस कौन जाने ! 75
तुर्कमान गेट 76
आओ ! 77
रेडियो पर एक योरपीय संगीत सुनकर 81
यह क्या सुना है मैंने 84
हैवाँ ही सही 86
बहुत सीधे-से प्रश्न 88
राजनीतिक करवटें, 1948 90
स्वर्गीया रज़िया सज्जाद ज़हीर 92
नाविक 'विद्रोहियों' पर बमबारी 94
टूटी हुई, बिखरी हुई 95

कुछ शेर **101-112**

कुछ शेर 103
ग़ज़ल के शेर 107
कुछ शेर 108
चार शेर 109
तीन शेर 110
तीन शेर 111
कुछ शेर 112

ग़ज़लें

1

चुपके से कोई कहता है : शाइर नहीं हूँ मैं।
क्यों अस्ल में हूँ वो जो बज़ाहिर नहीं हूँ मैं।

भटका हुआ-सा फिरता है दिल किस ख़याल में
क्या जादए-वफ़ा का मुसाफ़िर नहीं हूँ मैं ?

क्या वसवसा है, पा के भी तुमको यक़ीं नहीं
मैं हूँ जहाँ वहीं भी तो आख़िर नहीं हूँ मैं।

सौ बार उम्र पाऊँ तो सौ बार जान दूँ
सदक़े हूँ अपनी मौत पे काफ़िर नहीं हूँ मैं।

[1971]

2

अपने दिल का हाल यारो, हम किसी से क्या कहें;
कोई भी ऐसा नहीं मिलता जिसे अपना कहें।

हो चुकी जब ख़त्म अपनी ज़िन्दगी की दास्ताँ
उनकी फ़रमाइश हुई है, इसको दोबारा कहें !

आज इक् ख़ामोश मातम-सा हमारे दिल में है :
ख़ाब के-से दिन हैं, वर्ना हम इसे जीना कहें।

यास ! दिल को बाँध, सर पर जल्द साया कर, जुनूँ
दम नहीं इतना जो तुमसे साँस का धोका कहें।

देखकर आख़ीर वक़्त उनकी मुहब्बत की नज़र
हमको याद आया वो कुछ कहना जिसे शिकवा कहें।

उसकी पुरहसरत निगाहें देख कर रह्म आ गया
वर्ना जी में था कि हम भी हँस के दीवाना कहें।

क़ाफ़िले वालो, कहाँ जाते हो सहरा की तरफ़,
आओ बैठो तुमसे हम मजनूँ का अफ़साना कहें।

मुश्कबू-ए-जुल्फ़ उसकी, घेर ले जिस जा हमें,
दिल ये कहता है, उसी को अपना काशाना कहें।

[1935]

3

फिर किसी को इक दिले-काफ़िर अदा देता हूँ मैं
ज़िन्दा हूँ और अपने ख़ालिक़ को दुआ देता हूँ मैं

बेखुदी में दर्द की दौलत लुटा देता हूँ मैं,
'जब ज़ियादा होती है मय तो लुँढ़ा देता हूँ मैं'।*

अपनी ही क़द्रे-खुदी की पुरतक़ल्लुफ़ लज़्ज़ते—
आप क्या लेते हैं मुझसे और क्या देता हूँ मैं!

इश्क़ की मजबूरियाँ हैं, हुस्न की बेचारगी :
रूए आलम देखिएगा ? आइना देता हूँ मैं।

इल्मो-हिक़मत, दीनो-ईमाँ, मुल्क़ो-दौलत, हुस्नो-इश्क़
आपको बाज़ार से जो कहिए ला देता हूँ मैं।

आरज़ूओं की बियाबानी है और ख़ामोशियाँ
ज़िन्दगी को क्यों सबाते-नक़्शे-पा देता हूँ मैं ?

[1943]

* स्व. लक्ष्मीचंदजी से सुना हुआ मिसरा !

4

ईमान गड़बड़ी में है दिल के हिसाब में
लिक्खा हुआ कुछ और मिला है किताब में

दिल जिनमें ढूँढ़ता था कभी अपनी दास्ताँ
वो सुर्ख़ियाँ कहाँ हैं मुहब्बत के बाब में !

ऐ दिलनेवाज़ पहलू ही जब दिल के और हों,
क्या ख़िलवतों में लुत्फ़ धरा क्या हिजाब में !

उस आस्ताँ तक हमको बहारों में ले के जाओ
जिस पर कोई शहीद हुआ हो शबाब में !

[1943]

5

यहाँ कुछ रहा हो तो हम मुँह दिखाएँ
उन्होंने बुलाया है क्या ले के जाएँ

कुछ आपस में जैसे बदल-सी गई हैं
हमारी दुआएँ तुम्हारी बलाएँ

तुम एक् ख़ाब थे जिसमें खुद खो गए हम
तुम्हें याद आएँ तो क्या याद आएँ

वो एक् बात् जो ज़िन्दगी बन गई है
जो तुम भूल जाओ तो हम भूल जाएँ

वो ख़ामोशियाँ जिनमें तुम हो न हम हैं
मगर हैं हमारी तुम्हारी सदाएँ

बहुत नाम हैं एक 'शमशेर' भी है
किसे पूछते हो किसे हम बताएँ

[1945]

6

'आए भी वो गए भी वो'—गीत है यह, गिला नहीं
हमने य' कब कहा भला, हमसे कोई मिला नहीं।

आपके एक् ख़याल में मिलते रहे हम आपसे
यह भी है एक सिलसिला गो कोई सिलसिला नहीं।

गर्मे-सफ़र हैं आप तो हम भी हैं भीड़ में कहीं
अपना भी काफ़िला है कुछ आप् ही का काफ़िला नहीं।

दर्द को पूछते थे वो, मेरी हँसी थमी नहीं
दिल को टटोलते थे वो, मेरा जिगर हिला नहीं।

आई बहार हुस्न का ख़ाबे-गराँ लिए हुए :
मेरे चमन को क्या हुआ, जो कोई गुल खिला नहीं।

उसने किए बहुत जतन, हार के कह उठी नज़र :
सीनए-चाक का रफ़ू हमसे कभी सिला नहीं।

इश्क़ की शाइरी है ख़ाक़, हुस्न का ज़िक्र है मज़ाक़
दर्द में गर चमक नहीं, रूह में गर जिला नहीं

कौन उठाए उसके नाज़, दिल तो उसी के पास है;
'शम्स' मज़े में हैं कि हम इश्क़ में मुब्तिला नहीं।

[1950]

7

फिर निगाहों ने तेरी दिल में कहीं चुटकी ली
फिर मेरे दर्द ने पैमान वफ़ा का बाँधा

और तो कुछ न किया इश्क़ में पड़कर दिल ने
एक इन्सान से इन्सान वफ़ा का बाँधा !

एक फाहा भी मेरे ज़ख़्म पे रक्खा न गया
और सर पे मेरे एहसान दवा का बाँधा

इस तकल्लुफ़ की मोहब्बत थी कि उठते ही बनी
रंग यारों ने वो मेहमानसरा का बाँधा

मौसमे-अब्र में आता है मेरे नाम ये हुक्म
कि ख़बरदार जो तूफ़ान बला का बाँधा।

मुस्कुराते हुए वो आए मेरी आँखों में—
देखने क्या सरोसामान क़ज़ा का बाँधा !

[1952]

8

मैं आपसे कहने को ही था, फिर आया ख़याल एकाएक
कुछ बातें समझना दिल की, होती हैं मोहाल एकाएक

साहिल पे वो लहरों का शोर, लहरों में वो कुछ दूर की गूँज :
कल आपके पहलू में जो था, होता है निढाल एकाएक

जब बादलों में घुल गई थी कुछ चाँदनी-सी शाम के बाद
क्यों आया मुझे याद अपना वह माहे-जमाल एकाएक

सीनों में क़यामत की हूक, आँखों में क़यामत की शाम :
दो हिज्र की उम्रें हो गईं दो पल का विसाल एकाएक

दिल यों ही सुलगता है मेरा, फुँकता है युँ ही मेरा जिगर
तलछट की अभी रहने दे, सब आग न ढाल एकाएक

जब मौत की राहों में दिल, ज़ोरों से धड़कने लगता
धड़कन को सुलाने लगती उस शोख़ की चाल एकाएक

हाँ, मेरे ही दिल की उम्मीद तू है, मगर ऐसी उम्मीद
फल जाय तो सारा संसार हो जाय निहाल एकाएक

एक उम्र की सरगरदानी लाए वो घड़ी भी 'शमशेर'
बन जाए जवाब आपसे आप आँखों का सवाल एकाएक

[1955]

9

बहुत काम बाक़ी है—टाला पड़ा है।
मगर उनकी आँखों पे' जाला पड़ा है।

सुराही पड़ी है पियाला पड़ा है
करें क्या—ज़ुबानों पे' ताला पड़ा है

बहुत सुर्ख़रूई थी वादों में जिनके
जो मुँह उनका देखो तो काला पड़ा है

कहाँ उठ के जाने की तैयारियाँ हैं
सब असबाब बाहर निकाला पड़ा है ?

यहाँ पूछने वाला कोई नहीं है
जिसे भी जहाँ मार डाला, पड़ा है ?

भला कोई सीना है वो भी कि जिस पर
न बरछी पड़ी है, न भाला पड़ा है !

× × ×

उसे बदलियों में भी पहचान लोगे
कि उस चाँद-से मुँह पे' हाला पड़ा है

य' बादल की लट चाँद पर है, कि मन को
दबाए हुए कौड़ियाला पड़ा है

वो जुल्फ़ों में सब कुछ छुपाए हुए हैं
अँधेरा लपेटे, उजाला पड़ा है

× × ×

बहुत ग़म सहे हमने 'शमशेर', उस पर
अभी तक ग़मों का कसाला पड़ा है

10

कहो तो क्या न कहें, पर कहो तो क्योंकर हो,
जो बात-बात में आ जायँ वो, तो क्योंकर हो !

हमारी बात हमीं से सुनो तो कैसा हो
मगर ये जाके उन्हीं से कहो तो क्योंकर हो !

ये बेदिली ही न हो संगे-आस्तानए-यार
वगरना इश्क़ की मंज़िल ये हो तो क्योंकर हो !

क़रीबे-हुस्न जो पहुँचा तो ग़म कहाँ पहुँचा—
हमीं को होश नहीं, आपको तो क्योंकर हो !

ख़याल हो कि मेरे दिल का वह्म हो, आख़िर
तुम्हीं जो एक न अपने बनो तो क्योंकर हो !

ज़माना तुम हो, जहाँ तुम हो, ज़िन्दगी तुम हो
जो अपनी बात पे क़ायम रहो, तो क्योंकर हो !

हमारा बस है कोई, आह की, हुए ख़ामोश,
मगर जो ये भी सहारा न हो, तो क्योंकर हो !

हरेक तर्ह वही आरज़ू बनें मेरी
ये ज़िन्दगी का बहाना न हो, तो क्योंकर हो !

य' सब सही है मगर ऐ मेरे दिले-नाशाद
कोई भी ग़म के सिवा दोस्त हो, तो क्योंकर हो !

ये साँस में जो उसी नाम की अटक-सी है,
वो ज़िंदगी से फ़रामोश हो तो क्योंकर हो !

जो आरज़ू में नहीं, अब वो साँस में कुछ है,
वो, आह, दिल से फ़रामोश हो तो क्योंकर हो !

हज़ार हम उसे चाहें कि अब न चाहें और,
जो साँस-साँस में रम जाय वो, तो क्योंकर हो !

[1939]

11

ये कैसे कवि का बग़ीचा है खोया-खोया हुआ
दिलो-दिमाग़ है सपनों में, दर्द सोया हुआ

विचार अपने जो हैं घास-फूस तिनका हैं
ख़याल आपका है मोतियों-पिरोया हुआ

जिसे तिरा ही समझते थे वो तो अपना था
कहाँ क़लम है तिरा ख़ून में डुबोया हुआ

फ़क़त है सुर्ख़ दमक सी, कहाँ है चिंगारी
जो दिल को आँख दिखाता है बीज बोया हुआ

तमाम ग्रन्थ ही टीके हुए हैं चन्दन से
इक-एक हर्फ़ है 'गंगो-जमन' से धोया हुआ !

हम अपने शहर के बाज़ार ही में खोए गए
किसी को भी न मिला अपना आपा खोया हुआ !

बदल चुका है ज़माना ये सोचकर 'शमशेर'
जो एक ज़माने से चुप था, वो आज गोया हुआ

12

जहाँ में अब तो जितने रोज़
अपना जीना होना है,
तुम्हारी चोटें होनी हैं–
हमारा सीना होना है।

वो जल्वे लोटते फिरते हैं
ख़ाको-ख़ूने-इंसाँ में :
'तुम्हारा तूर पर जाना
मगर नाबीना होना है।'*

क़दमरंजा है सूए-बाम
एक शोख़ी क़यामत की :
मेरे ख़ूने-हिना-परवर से
रंगी ज़ीना होना है !

वो कल आएँगे वादे पर
मगर कल देखिए कब हो !
ग़लत फिर, हज़रते-दिल
आपका तख़्मीना होना है।

* यह मिसरा लेखक के मामा स्व. बाबू लक्ष्मीचंदजी का फ़रमाया हुआ है।

बस ए शमशेर, चल कर
अब कहीं उज़लतगज़ीं हो जा
कि हर शीशे को महफ़िल में
गदाए-मीना होना है।

13

वो दुश्मन मेरा इतना अच्छा है क्यों
जो अपना नहीं है वो अपना है क्यों।

मुझे बादशाहत नहीं चाहिए
मगर तू ही कुल मेरी दुनिया है क्यों।

तुम्हें याद करता हूँ एकान्त में
जुनूँ मेरा पहले से अच्छा है क्यों।

तुम्हें मुझसे मिलना गवारा नहीं
मुझे और जीना गवारा है क्यों।

मेरे दिल में रातों में यह तुझ बग़ैर
बबूला-सा रह-रह के उठता है क्यों।

किसी और के हो दिलो जान से
मेरे साथ फिर ये तमाशा है क्यों।

किसी को यहाँ जानता कौन है
किसी के लिए जी भटकता है क्यों।

जुबाँ दर्द की सिन्फ़े नाज़ुक से है
वो 'शमशेर' का शेर सुनता है क्यों।

14

राह तो एक थी हम दोनों की :
आप किधर से आए-गए !
—हम जो लुट गए पिट गए, आप जो
राजभवन में पाए गए !

किस लीलायुग में आ पहुँचे
अपनी सदी के अन्त में हम
नेता, जैसे घास-फूस के
रावन खड़े कराए गए।

जितना ही लाउडस्पीकर चीख़ा
उतना ही ईश्वर दूर हुआ :
(—अल्ला-ईश्वर दूर हुए !)
उतने ही दंगे फैले, जितने
'दीन-धरम' फैलाए गए।

मूर्ति-चोर मन्दिर में बैठा
औ' गाहक अमरीका में !
दान-दच्छिना लाखों डॉलर
गुपुत-दान करवाए गए !

दादा की गोद में पोता बैठा,
'महबूबा ! महबूबा···' गाए
दादी बैठी मूंड़ हिलाए···
'हम किस जुग में आय गए'।

गीत-ग़ज़ल है फिल्मी लय में
शुद्ध गलेबाज़ी, 'शमशेर'
आज कहाँ वो गीत जो कल थे
गलियों-गलियों गाए गए !

[1982]

15

उलट गये सारे पैमाने, कासागरी क्यों बाक़ी है।
देस के देस उजाड़ हुए, दिल की नगरी क्यों बाक़ी है।

कौन है अपना कौन पराया, छोड़ो भी इन बातों को
इक हम-तुम हैं ख़ैर से, अपनी पर्दादरी क्यों बाक़ी है।

शायद भूले-भटके किसी को रात हमारी याद आई
सपने में जब आन मिले फिर बेख़बरी क्यों बाक़ी है।

किसका साँस है मेरे अन्दर : इतने पास औ' इतनी दूर
इस नज़दीकी में दूरी की हमसफ़री क्यों बाक़ी है।

सचमुच मुझको ऐसा लगा जैसे तुम बिल्कुल पास ही हो
साँस में अब तक वही सुनहरी दोपहरी क्यों बाक़ी है।

बीत गये युग फिर भी जैसे कल ही तुमको देखा हो
दिल में औ' आँखों में तुम्हारी ख़ुशनज़री क्यों बाक़ी है।

शोर भजन औ' कीर्तन का है या फ़िल्मी धुनों का हंगामा
सर पे हि लाउडस्पीकर की टेढ़ी छतरी क्यों बाक़ी है।

कैसा सियासत का तूफ़ान कि आग की लपटों में इंसान
अपनों पर अपनों की ही बेदादगरी क्यों बाक़ी है।

धर्म तिजारत पेशा था जो वही हमें ले डूबा है
बीच भँवर के सौदे में यह इक खंजरी क्यों बाक़ी है।

[1984]

16

भूला हुआ था आज तलक अपने घर को मैं
क्या जाने चल दिया था कहाँ के सफ़र को मैं

तुम मुस्कुरा रहे थे मुझे देख-देख कर
अपनी समझ रहा था हरेक की नज़र को मैं

गर्दिश से उन निगाहों को कुछ होश आ गया
दुश्मन समझ रहा था खुद अपनी नज़र को मैं

ऐसे भी मोड़ आए हैं चुपचाप बार-बार
तकता था राहबर मुझे और राहबर को मैं

'शमशेर' और कुछ नहीं दुनिया जहान में
इक दिल है, ढूँढ़ता हूँ, उसी बेख़बर को मैं

17

कहता है बाज़ुओं का ज़ोर, सारे जहाँ को तोलकर
मालिके-दो जहाँ ! इधर देखके मेरा मोलकर !

आज भी हैं वो मनचले, आज भी हैं वो सिरफिरे
तीरो-सनाँ की बाढ़ पर, चलते थे सीना खोलकर !

इसमें तो आग है बहुत, इसका तो ख़ून गर्म है—
बोले वो रखके दिल पे हाथ, और जिगर टटोलकर।

बातों में अपने रंग ला, लहज़े को शोख़तर बना
शर्तों को लोचदार रख, वादों को गोलमोल कर ! !

तर्ज़े-अदा इशारा हो, अब ये नहीं तरीक़े-फ़न
राज़ की बात भी कहो, 'शम्स', तो साफ़ खोलकर !

18

वही उम्र का एक पल कोई लाए
तड़पती हुई-सी ग़ज़ल कोई लाए

हक़ीक़त को लाए तख़ैयुल[1] से बाहर
मेरी मुश्किलों का जो हल कोई लाए

कहीं सर्द ख़ूँ में तड़पती है बिजली
ज़माने का रद्दो-बदल कोई लाए

उसी कम-निगाही[2] को फिर सौंपता हूँ
मेरी जान का क्या बदल कोई लाए

दुबारा हमें होश आए न आए
इशारों का मौक़ा-महल कोई लाए

नज़र तेरी दस्तूरे-फ़िरदौस[3] लाई
मेरी ज़िन्दगी में अमल कोई लाए

1. कल्पना 2. उपेक्षा 3. स्वर्गिक संविधान

19

अन्दाज़ा ही बहक न गया था निशाँ के पार
थी सैद[1] की निगाह भी तीरो-कमाँ के पार !

आज़ादियाँ हैं खित्तए-वहम्-ओ-गुमाँ[2] के पार
आओ बसाएँ एक जहाँ इस जहाँ के पार !

ख़ामोशिए-दुआ हूँ, मुझे कुछ ख़बर नहीं
जाती हैं क्या सदाएँ तेरे आस्ताँ[3] के पार !

सात आसमान झुक के उठाते हैं किसके नाज़ ?
किसकी झलक-सी है चमने-कहकशाँ[4] के पार ?

इतना उदास आपका दिल किसलिए हुआ ?
हर दर्द की दवा है, ज़मानो-मकाँ के पार !

क़ायम महाज़ अम्न के[5] हिन्दोस्ताँ से हों !
फ़ौजें न जाएँ सरहदे-हिन्दोस्ताँ के पार !

[1943]

---

* इस ग़ज़ल की ज़मीन स्वर्गीय लक्ष्मीचंदजी से सुने हुए मिसरे से मिली थी : 'मेरी सदा पहुँच ही गई आसमाँ के पार'।

1. शिकार 2. वहम और गुमान का घेरा 3. ड्योढ़ी 4. आकाशगंगा का उपवन 5. शांतिक्षेत्र

20

मैं गया, आप क्यों हुए मग़्मूम[1]
ज़िन्दगी मौत से ही थी मौसूम।
आप ही कल मेरा सहारा थे
आपको आज और क्या मालूम !
मेरे उक़बा[2] से खेलने वाले
क्या हुआ वह मेरा दिले-मरहूम ?
है चमन की बहार ही गुलचीं[3]
ए कली दिल की, इस क़दर मत झूम
आपकी याद मिट नहीं जाती···
यानी वह एक हस्तिए-मौहूम[4] !
आज तू उसके दर पे जा पहुँचा
आज तू अपने दिल का पत्थर चूम
किस क़दर आपकी इनायत है
दर्द से भी है आज दिल महरूम।
आह वो दिल जिसे कोई समझा
मेरे पहलू में इक बुते-मासूम
फिर फ़िज़ाओं को होश आने लगा
फिर उठी इक सदा-ए-नामालूम !

---

1. दुखित 2. परलोक 3. माली 4. नगण्य

यह ख़याल इक गली किसी की है
मैं कहाँ हूँ मुझे नहीं मालूम !
मैं कई बार मिट चुका हूँगा
वर्ना इस ज़िन्दगी की इतनी धूम !

[1943]

21

ये शोख़ चाल तेरी काफ़िराना मस्ताना !
किसी का ख़ाबो-ख़याले-शबाना मस्ताना !

जो खुद ही बहका हुआ हो, तो उस पे क्यों डाले
भला कोई निगहे-आशिक़ाना मस्ताना !

सुना चुका है कोई मेरे कुंजे-आफ़ियत[1] में दिल
कलामे-शौक़ अजब वालेहाना[2] मस्ताना !

वो सरख़ुशी[3] का ज़माना था, क्या कहूँ तुझसे,
खुदा को पूजता था मैं दिवाना मस्ताना !

नवाए-असग़रो-इक़बाल[4] पर फ़िदा था दिल;
नया था दर्द मेरा शाइराना मस्ताना !

सुना है मैंने निराला का सरमदी आहंग
कलामे पन्त अजब राहिबाना[5] मस्ताना !

---

1. आरामगाह 2. वलियों जैसा 3. अत्यधिक प्रसन्नता 4. असग़र (गोंडवी) और इक़बाल की कविताएं 5. दुनियादारी से मुक्त

सुने हैं दर्द भरे गीत मैंने बच्चन के
सुना है मैंने सुमन का तराना मस्ताना !

सुनी है मैंने तड़पती हुई नरेन्द्र की नज़्म
विसालो-हिज्र का रंगीं फसाना मस्ताना !

मेरी निगाह में फिरता है आज भी 'शमशेर'
शबाब का वही काफ़िर ज़माना मस्ताना !

[1941]

22

बन्दगी इक़ मुक़ाम था औ' वो मुक़ाम हो चुका।
इश्क़ भी नाम था तेरा औ' तेरा नाम हो चुका !

मह्वियते-सुजूद[1] में अस्ल वुजूद भी गया :
सुबूह को भी समझ के शाम बन्दए-शाम हो चुका।

आपकी दास्तान थी गोया किसी की ज़िन्दगी :
आपके आने-आने तक क़िस्सा तमाम हो चुका !

मह्व है क़ायनात कुल, मह्व है उसकी ज़ात कुल
कौन किसे ख़बर करे किसका निज़ाम हो चुका !

एक ख़याले-ख़ाम[2] हूँ, दिल से मुझे भुलाइए :
आपको आ चुका हूँ याद, इश्क़ तमाम हो चुका !

इश्क़ में कैफ़ियत नहीं, हुस्न में तमूकनत[3] नहीं
हिज्र में वह सकत नहीं, वस्ले-दवाम[4] हो चुका !

[1941]

---

1. ध्यानमग्न होने की अवस्था 2. गलत विचार 3. गर्व 4. स्थायी मिलन

लड़ाई व ज़िंदगी

1

हम अपने ख़याल को सनम समझे थे
अपने को ख़याल से भी कम समझे थे
  होना था—समझना न था कुछ भी, 'शमशेर',
होना भी कहाँ था वह जो हम समझे थे !

[1945]

4

(भारत देश की ईद; 1980 : मुरादाबाद[1])

वह काम मुरादाबाद में हम कर आए,
दुनिया में ऊँचा अपना परचम कर आए !
बच्चों की, जवानों की उमीदों की वो ईद !
उस ईद का हम जा के मातम कर आए ! !

1. रुबाई-4 और 5 को इसी शीर्षक के साथ पढ़ें।

5

राष्ट्रीय स्वतंत्रता-दिवस पूर्व की ईद–
आते ही,–स्वतंत्रता दिवस पर है शहीद ! !
है राष्ट्र महान् ! राष्ट्र के धर्म महान् !
ये सब हैं मुरादाबाद में क़ाबिले-दीद[1] ! !

1. देखने के योग्य

6

यह काम नहीं है कामचोरी है महज़
—जीना ये नहीं, हरामखोरी है महज़
कैसा दिल, क्या दिमाग़ था तुमको मिला
बस, बस, चुप रह, बकवास कोरी है महज़

7

हैं आसमाने-हिन्द के तारे दोनों
हैं सरज़मीने-पाक के प्यारे दोनों
यह किसकी नज़र खाए जाती है उन्हें
आपस ही में लड़-लड़ के हारे दोनों ?

8

बनियों ने समाजवाद को जोखा है
गहरा सौदा है काल भी चोखा है
दुकानें नई खुली हैं आज़ादी की
कैसा साम्राज्यवाद का धोखा है !

9

कितना ज़लज़ला
कितना तूफ़ान आया—
सदहा सदियों में
उभर के इन्सान आया
गो लाख हैवान से भी
बदतर है वो आज
आख़िर तो उसीसे 'उठके'
इन्सान आया

10
(क़िता)

आप भी किस हवा में हैं, शमशेर !
आप और शेर का यह कारोबार ! !

माना, माना, माना कि शेरो-फ़ने-लतीफ़
आप की जान है, मगर सरकार—
आप की जान की है क्या क़ीमत !
आप जैसे पड़े हुए हैं हज़ार !

और ही मंज़िलें हैं ये, साहब
जिनको आसाँ नहीं है करना पार !
आपकी राह दूसरी है, जनाब
शाहराहों से आपको सरोकार ?
और ही—सी हैं आपकी गलियाँ !
और ही—से हैं कूचओ-बाज़ार

देस तो एक ही है हम सब का;
मगर इसमें है एक ही तक़रार
किसका पहले है किसका पीछे है
कौन बा-कार कौन है बेकार;

कौन आगे है और मौज में है—
कौन पीछे है और ख़स्तओ-ज़ार,

कहाँ बंदा ग़रीब ख़ानाबदोश
कहाँ आली-जनाब, आली बेक़ार !
हम तो 'शमशेर' वह फ़साना हैं
जिसका सुनना-सुनाना है बेकार !

11

जगह-जगह तेरी बातें थीं, तेरे चर्चे थे;
ज़माना क्या वो हमको नहीं याद, क्या कुछ था ?
जो 'कारवाँ' से उठी थी सदाए-बाँगे-जरस,[1]
उसी पे चलता अगर बादाबाद···क्या कुछ था ! !
लिखी थी नज़्म तो अंग्रेज़ी में—मगर क्या ख़ूब !
जो और बढ़ता ये हिन्दी नज़ाद,[2] क्या कुछ था ! !
तबाह कर दिया तुझको शराबख़ोरी ने
वर्गना, तू भुवनेश्वर प्रसाद, क्या कुछ था !

यह क़िता अप्रतिम एकांकी-नाटककार भुवनेश्वर की याद से संदर्भित है। भुवनेश्वर के एकांकी-संग्रह 'कारवाँ' का ज़िक्र इसमें आया है।

1. घंटियों की आवाज़ की धुन 2. वंश

नज़्में

गजानन माधव मुक्तिबोध

ज़माने-भर का कोई इस क़दर अपना न हो जाए
कि अपनी ज़िन्दगी ख़ुद आपको बेगाना हो जाए

सहर होगी ये शब बीतेगी और् ऐसी सहर होगी
कि बेहोशी हमारे होश का पैमाना हो जाए

किरन फूटी है ज़ख़्मों के लहू से : यह नया दिन है :
दिलों की रोशनी के फूल हैं—नज़राना हो जाए

ग़रीबुद्दहर थे हम; उठ गए दुनिया से; अच्छा है...
हमारे नाम से रौशन अगर वीराना हो जाए

बहुत खींचे तेरे मस्तों ने फ़ाक़े फिर भी कम खींचे
रियाज़त ख़्वार होती है अगर अफ़साना हो जाए

चमन खिलता था, वह खिलता था, और वह खिलना कैसा था
कि जैसे हर कली से दर्द का याराना हो जाए !

वह गहरे आसमानी रंग की चादर में लिपटा है
कफ़न सौ ज़ख़्म फूलों में वही पर्दा न हो जाए

इधर मैं हूँ उधर मैं हूँ, अजल, तू बीच में क्या है
फ़कत इक नाम है, यह नाम भी धोका न हो जाए

× × ×

वो सरमस्तों की महफ़िल में गजानन मुक्तिबोध आया
सियासत ज़ाहिदों की खंदए-दीवाना हो जाए।

[1964]

स्व. भारतभूषण अग्रवाल

1

अभी तो उम्र थी !—देता सहारा तू मुझे ! !···लेकिन
मेरे कमज़ोर काँधे को तेरी मिट्टी उठानी थी ! !

चिता तेरी जली 'हज़रत निज़ामुद्दीन'[1] के दर पर :
मुक़द्दस[2] ख़ाक पर आई जो मथुरा की निशानी[3] थी !

उरूजे-ज़िन्दगी[4] में क्यों यकायक यह ज़वाल[5] आया ?
फ़ना के पार भी शायद कोई मंज़िल बनानी थी !

अजब मस्ती-सी थी, भारत, तेरी जद्दो-जेहद[6] में भी
मुसल्सल[7] जाँफ़िशानी इक फ़साना थी, कहानी थी !

न क्यों चर्चे हों तेरी चाराजोई[8] ग़मगुसारी[9] के !
वही ग़म का मदावा[10] था जो तेरी छेड़ख़ानी थी !

अदब[11] में ता-अबद[12] क़ायम रहेंगी तेरी तख़लीक़ें;[13]
अदब का सानेहा[14] गो तेरी मर्गे-नागहानी थी !

हो तेरी आत्मा को शान्ति हासिल दुआ ये है
जो लाफ़ानी[15] थी अब भी है, गई वो शै जो फ़ानी[16] थी !

2

जिधर भी देखता हूँ मैं तेरा ही अक्स उभरता है :
अभी तक मेरी आँखों में तेरी तस्वीर फिरती है !

बलन्दी पा के, दुनिया से यकायक तेरा उठ जाना !
पहुँच कर अपनी मंज़िल पर कोई तक़दीर फिरती है !

बहुत कुछ कर गया, फिर भी बहुत से ख़्वाब अधूरे थे।
तुझी को ढूँढती हर ख़्वाब की ताबीर[17] फिरती है !

फ़िज़ाओं में तेरी आवाज़ की झनकार-सी अब तक
किसी को ढूँढती-सी काँपती दिलगीर[18] फिरती है !

कहाँ होंगे अब ऐसे ज़िन्दादिल ! हर याद में गोया
तेरी ज़िन्दादिली की बोलती तस्वीर फिरती है !

अजब सब्रो-सुकूँ[19] या ! बन्दे-ग़म[20] काटे तो यों हँस कर—
'ग़मों की टूटती देखो पड़ी ज़ंजीर फिरती है' ! !

हो तेरी आत्मा को शान्ति हासिल दुआ ये है
हरेक शै अपने मर्कज़[21] को दमे-आख़ीर[22] फिरती है !

3

अदीब अहबाब[23] तेरी मश्के-पैहम[24] से सबक़ सीखें !
अज़ीज़-ओ-अक़रबा[25] तेरे, तेरी हिम्मत से हिम्मत लें !

जहाँ भी तू रहा तेरी वफ़ादारी ही सब कुछ थी !
यही कहता था—लें हमसे जहाँ तक हो, मशक्कत लें ! !

सियासत में तुझे क्या दख़्ल ! हाँ, यह भी सियासत थी—
घरेलू, बेज़रर[26] सी कुछ—अगर, नामे-सियासत लें !

मिज़ाह-ओ-तन्ज़[27]—ओ-तुक्तक लें, कि सोशल नज़्म लें तेरी;—
वही इक छटपटाहट-सी है, मन की जो भी रंगत लें !

तजस्सुस[28] थी तेरी फ़ितरत[29], तो मश्क़े-फ़न[30] रियाज़त[31] थी;
यजा है[32], तेरी काविश[33] से अगर दर्से[34]-फ़साहत[35] लें !

कठिन हैं फ़िक्र-ओ-फ़न[36] के मर्हले[37] आख़ीर तक क्या-क्या !
कभी समझें तो अहले-दिल तेरा हंगामे-रहलत[38] लें !

हो तेरी आत्मा को शान्ति हासिल दुआ ये है
नया शुभ जन्म ले तू, औ' नए युग तेरा स्वागत लें

[1976]

---

1. 'निज़ामुद्दीन वेस्ट', यमुना के तट तक आज नई दिल्ली का यह क्षेत्र सदियों से बहुत पवित्र क्षेत्र माना जाता रहा है, 2. पवित्र, 3. मथुरा स्व. डॉ. भारतभूषण अग्रवाल का जन्मस्थान, 4. जीवन के उत्कर्ष (में), 5. ह्रास, 6. संघर्ष, 7. लगातार, निरन्तर, 8. तदवीर, प्रयत्न, 9. हमदर्दी, 10. उपचार, 11. साहित्य, 12. चिरकाल तक, 13. रचनात्मक कृतियाँ, 14. मार्मिक दुर्घटना, 15. अमर, 16. नश्वर 17. स्वप्नफल, 18. दिल को मसोसती हुई, 19. सब्र और धीरज, 20. दुखों के बंधन, 21. केन्द्र, 22. अन्तकाल में, 23. साहित्यिक मित्र, 24. निरन्तर अभ्यास, 25. सगे-सम्बन्धी, 26. निरापद, 27. हास्य और व्यंग्य, 28. खोज वृत्ति, 29. प्रकृति, 30. कला का अभ्यास, 31. साधना, 32. उचित ही है, 33. घोर प्रयत्नों, 34. पाठ, 35. सहज स्तरीय शैली, 36. चिंतन और कला, 37. मंज़िलें, 38. मृत्यु-क्षण (को उदाहरण-स्वरूप सामने रखें)

ईरान और अफ़ग़ानिस्तान

एक होकर सारे अख़बारों का हल्ला देखिए !
साथ अमरीका के गोया ये भी दस्ता देखिए !

बह्रि,[1] बेड़े औ' हवाई-अड्डे ही काफ़ी न थे
'बेवतन' विस्थापितों का एक रेला देखिए !

साफ़ हक़ की बात रक्खी उसने सबके सामने
ये कुसूर ईरान का कितना बड़ा था देखिए !

एकदम तख़्ता हुकूमत का पलट देते हैं, ये
काम करते हैं सिफ़ारतखाने[2] क्या-क्या ! देखिए !

सरहदी गाँधी, पठानों का वो ख़ान अब्दुल ग़फ़्फ़ार
सुनिए तो क्या कहता है इक मर्द-ए-दाना देखिए !

सोवियत फ़ौजी मदद क़ाबुल ने जब माँगी तो आई
था मुनासिब ही क़दम ये हस्ब-ए-वादा[3] देखिए !

हद्दे पाकिस्तान में सी. आई. ए. की साजिशें
सरहदी फ़ौजों को हमलावर बनाना देखिए !

हिन्द महासागर के बीचोंबीच डियागोगार्सिया
हिन्द, ईरान, अफ़्रीका होंगे निशाना देखिए !

ऐटमी बेड़े, हवाईयान हज़ारों ही जमा
क्या है अमरीका की ताक़त का ठिकाना देखिए !

परचमे इस्लाम के हैं साथ अमरीकी निशान
हो गया क़ुर्बान डॉलर पर ज़माना देखिए !

अहद-ओ-पैमाँ[4] अम्न की ख़ातिर है या है बहर-ए-जंग[5]
असलियत में क्या है अमरीका का चेहरा देखिए !

1. **समुद्री** 2. **दूतावास** 3. वादे के अनुसार 4. वादे 5. जंग के लिए

मुझको मिलते हैं अदीब और कलाकार बहुत

मुझको मिलते हैं अदीब और कलाकार बहुत
लेकिन इन्सान के दर्शन हैं मुहाल।

दर्द की एक तड़प–
हल्के-से दर्द की एक तड़प,
सच्ची तड़प,
मैंने अगलों के यहाँ देखी है;–

या तो वह आज है ख़ामोश तबस्सुम[1] में ज़लील[2]
या वो है कफ़-आलूद[3];
या वो दहशत का पता देती है;
या हिरासाँ[4] है;
या फिर इस दौर के ख़ाको-ख़ूँ में
गुमगश्ता है।

[1953]

1. मुस्कुराहट 2. अपमानित 3. थूक में लिथड़ी 4. हताश

धार्मिक दंगों की राजनीति

जो धर्मों के अखाड़े हैं
उन्हें लड़वा दिया जाए !
ज़रूरत क्या कि हिन्दुस्तान पर
हमला किया जाए ! !

मुझे मालूम था पहले हि
ये दिन गुल खिलाएँगे
ये दंगे और धर्मों तक भि
आख़िर फैल जाएँगे

तबीयत को रँगो जिस रंग में
रँगती हि जाती है;
बढ़ो जिस सिम्त में, उसकी हि
सीमा बढ़ती जाती है ! !

जो हिन्दु-मुस्लिम था वो
सिक्ख-हिन्दू हो गया
देखो !

ये नफ़रत का तक़ाज़ा
और कितना बढ़ गया
देखो ! !

हम इसके पहले भी
मिल-जुल के आख़िर
रहते आए थे

जो अपने भी नहीं थे,
वो भि कब इतने
पराए थे !

हम अपनी सभ्यता के
मानी-औ-मतलब ही
खो बैठे

जो थीं अच्छाइयाँ
इतिहास की
उन सबको धो बैठे

तबीअत जैसी बन
जाती है, फिर बनती ही
जाती है;

जो तन जाती है आपस में
तो फिर तनती ही
जाती है !

हमारे बच्चे वो ही
सीखते हैं, हम जो
करते हैं;

हमें ही देखकर, वह तो
बिगड़ते या, सँवरते हैं।

जो हश्र होता है
फ़र्दों का, वही
क़ौमों का होता है
वही फल मुल्क को
मिलता है, जिसका
बीज बोता है !

ये हालत देखकर
अपने जो दुश्मन मुल्क
होते हैं
हमारी राह में वो चुपके-
-चुपके काँटे बोते हैं!

हमारे धर्मों की क्या-क्या न
वो तारीफ़ करते हैं
वो कहते हैं कि—हम तो
आपके धर्मों पे मरते हैं

ये हैं कितने महान
इनकी तो बुनियादें
बचाना है।

[दरअसल, हमको लड़ाकर
उनकी बुनियादें हिलाना
है !]

ये मुल्क इतना बड़ा है
यह कभी बाहर के
हमले से
न सर होगा !
जो सर होगा तो बस
अन्दर के फ़ितने से

ये मनसूबा है—
दक्षिण एशिया में
धर्म का चक्कर···
चले !—और बौद्ध,
हिन्दु, सिक्ख, मुस्लिम
में रहे टक्कर !

वो टक्कर हो कि सब कुछ
युद्ध का मैदान
बन जाए !
कभी जैसा नहीं था, वैसा
हिन्दुस्तान बन जाए ! !

हमारे सिवा इसका रस कौन जाने !

वो अपनों की बातें, वो अपनों की ख़ू-बू
हमारी ही हिन्दी, हमारी ही उर्दू !

ये कोयल्-ओ-बुलबुल के मीठे तराने :
हमारे सिवा इसका रस कौन जाने !

तुर्कमान गेट

ओस टपकी है कैसी ज़हरआलूद !
ज़ख़्म-ता ज़ख़्म
बाग़ में है जमूद[1]
जो भी गुँचा खिला
वो ज़ख़्मी था :
सुर्ख बेशक बहार का था वुजूद[2] !
× × ×
× × ×
यही अपना मक़ान है, जो कि था।
हाँ ! यही सायबान[3] है, जो कि था !
होंट गोया हैं सूखे पत्तों से।
ख़ामुशी चीख़ती है आँखों से।
× × ×
× × ×
इन्हीं गलियों में थे तो ग़ालिब भी।
"नींद क्यों रात भर नहीं आती ! ?"

1. गतिरोध की जड़ता 2. अस्तित्व 3. छानी-छप्पर

आओ !

1

क्यों यह धुकधुकी, डर,–
दर्द की गर्दिश यकायक साँस तूफ़ान में गोया।
छिपी हुई हाय-हाय में
सुकून
की तलाश।

बर्फ़ के गालों में है खोया हुआ
या ठंडे पसीने में ख़ामोश है
शबाब।

तैरती आती है बहार
पाल गिराए हुए
भीने गुलाब–पीले गुलाब
के।

तैरती आती है बहार
ख़ाब के दरिया में
उफ़क़ से

जहाँ मौत के रंगीन पहाड़
हैं।

जाफ़रान
जो हवा में है मिला हुआ
साँस में भी है।

मुँद गई पलकों में कोई सुबह
जिसे ख़ून के आसार कहेंगे।
—खो दिया है मैंने तुम्हें।

2

कौन उधर है ये जिधर घाट की दीवार···है ?
वह जल में समाती हुई चली गई है;
लहरों की बूँदों में
करोड़ों किरनों
की ज़िंदगी
का नाटक सा : वह
मैं तो नहीं हूँ।

फिर क्यों मुझे (अंगों में सिमिट कर अपने)
तुम भूल जाती हो
पल में :
तुम कि हमेशा होगी
मेरे साथ,
तुम भूल न जाओ मुझे इस तरह।

× × ×

एक गीत मुझे याद है।
हर रोम के नन्हे-से कली-मुख पर कल
सिहरन की कहानी मैं था;
हर ज़र्रे में चुम्बन के चमक की पहचान।
पी जाता हूँ आँसू की कनी-सा वह पल।

ओ मेरी बहार !
तू मुझको समझती है बहुत-बहुत—तू जब
यूँ ही मुझे बिसरा देती है।

खुश हूँ कि अकेला हूँ,
कोई पास नहीं है—
बजुज़ एक सुराही के,
बजुज़ एक चटाई के,
बजुज़ एक ज़रा-से आकाश के,
जो मेरा पड़ोसी है मेरी छत पर
(बजुज़ उसके, जो तुम होतीं—मगर हो फिर भी
यहीं कहीं अजब तौर से।)

तुम आओ, गर आना है
मेरे दीदों की वीरानी बसाओ;
शे'र में ही तुमको समाना है अगर
ज़िंदगी में आओ, मुजस्सिम···
बहरतौर चली आओ।
यहाँ और नहीं कोई, कहीं भी,
तुम्हीं होगी, अगर आओ;
तुम्हीं होगी अगर आओ, बहरतौर चली आओ अगर।
(मैं तो हूँ साये में बँधा-सा

दामन में तुम्हारे ही कहीं, एक गिरह-सा
साथ तुम्हारे।)

3

तुम आओ, तो खुद घर मेरा आ जाएगा
इस कोनो-मकाँ[1] में,
तुम जिसकी हया हो,
लय हो।

उस ऐन ख़मोशी की—हया-भरी
इन सिम्तों की पहनाइयाँ[2] मुझको
पहनाओ !
तुम मुझको
इस अंदाज़ से अपनाओ
जिसे दर्द की बेगानारवी[3] कहें,
बादल की हँसी कहें,
जिसे कोयल की
तूफ़ान-भरी सदियों की
चीख़ें,
कि जिसे 'हम-तुम' कहें।

(वह गीत तुम्हें भी तो
याद होगा ?)

[1949]

1. देश-काल, 2. विस्तार, 3. बेरुखी।

रेडियो पर एक योरपीय संगीत सुनकर

['अरुणा' और 'एम. ए. सिद्दीक़ी' को समर्पित]

[यह संगीत यों तो योरपीय था, मगर जिस तरह इसका चित्र मेरी भावनाओं में उभरता गया, मुझे लगा कि जैसे किसी अरबी-रूमानी इतिहास के हीरो और हीरोइन अपने घुटते आवेश, मर्म से जलते उच्छ्वास और कभी दर्दनाक फ़रियादों के क्षण, कभी आँसुओं-भरे मौन को मूर्त कर रहे हैं। उसी संगीत से मिलती-जुलती शैली में उसी भावुक प्रभाव को शब्दों से बाँधने का यह कुछ प्रयास है।—श.]

मैं
सुनूँगा तेरी आवाज़
पैरती बर्फ़ की सतह में तीर-सी
शबनम की रातों में
तारों की टूटती
गर्म
गर्म
शमशीर-सी—
तेरी आवाज़
ख़ाबों में घूमती-झूमती
आहों की एक तसवीर-सी
सुनूँगा : मेरी-तेरी है वह
खोई हुई

रोई हुई
एक तक़दीर-सी

परदों में—जल के—शांत
झिलमिल
झिलमिल
कमलदल।

रात की हँसी है तेरे गले में,
सीने में,
बहुत काली सुर्मयी पलकों में,
साँसों में, लहरीली अलकों में :
आई तू, ओ किसकी !
फिर मुसकराई तू
नींद में—ख़ामोश···वस्ल।

शुरू है आख़िरी पीर।···

सलाम !···
मेरे दर्द से हमकलाम
न हो !
जा, अब सो,
न रो।
तू मेरी बेबस बाँहों पर, सर रख कर, ओ,
न रो !

जो कुछ है
जो कुछ है

खो !
खो !
खो !
ओ शीरीं ! ओ लैला ! ओ हीर !
—जा !
—जा !
—जा !—सो !···

× ×

बेख़बर मैं,
बाख़बर आधी-सी रात।
बेख़बर सपने हैं।
बाख़बर है एक, बस, उसकी जात !
तू मेरी !···
आमीन !
आमीन !
आमीन !

[1943]

यह क्या सुना है मैंने

[बम्बई के दंगों की पराकाष्ठा : 1946]

[**नोट**–वस्तुस्थिति की सूचना मुझे एक अत्यन्त विश्वस्त पत्रकार के मुख से सुनने को मिली थी। सुनते ही जो प्रतिक्रिया मेरी हुई उसी की कुछ अभिव्यक्ति इन पंक्तियों में हुई है।

घोर सांप्रदायिक दंगों के दौरान (1946) जब उपलब्ध 'मौक़ों' से 'फ़ायदा' उठाकर लोग अपने-अपने व्यक्तिगत प्रतिद्वंद्वियों और दुश्मनों को 'धर्म' और 'मज़हब' के नाम पर गुंडों और मवालियों को रुपए दे-देकर ख़त्म करवाने में लगे थे, तो हद यहाँ तक पहुँच गई थी कि ये गुंडे पंद्रह-पंद्रह रुपए··· और अंत में दो-दो रुपए तक के लिए भी हत्याएँ करने को तैयार हो जाते थे : क्योंकि साम्प्रदायिक हत्याओं का बाज़ार वैसे ही गर्म था। अतः हत्याएँ करवानेवालों ने इन दो-दो रुपयों के साथ कुछ 'शर्तें' भी जोड़ दी थीं ! जिनका पालन करना अनिवार्य था : मसलन यह कि नियत स्थान और समय पर ही 'काम' हो ! यह मनुष्य नामधारी हिंस्र पशु के पतन की पराकाष्ठा थी।]

यह क्या सुना है मैंने कि 'दो रुपए सर है आज ! !'
–कुछ शहर बंबई की ज़बानी ख़बर है आज !

पन्द्रह से दो पे गिर गया बाज़ार क़ौम का !
क्या सस्ती फ़िरक़ेवार शहीदों की दर है आज ! !

दोनों तरफ़ से 'माल' का होता है ऑरडर !
'मज़हब' पे और 'धर्म' पे गहरी नज़र है आज ! !

जिस 'ख़ून' की है माँग वही ख़ून हो तो हो;–
वर्ना तो जान मारने वाले के सर है आज ! !

'सौदे' की शर्त यह है कि हो 'काम' वक़्त पर !
जो वक़्त जान पर है वो ईमान पर है आज ! !

हठधर्मियों ने खोल दिया 'धर्म' का भरम !
'ईमान' की कहाँ थी हमें जो ख़बर है आज ! !

कुछ शर्म खाएँ जी में अहिंसा के फ़ल्सफ़ी !
रुख़ उनके क़ाफ़िले का किधर था, किधर है आज ! !

बीहड़ बनों में डाल दिया है पड़ाव,–और
कहते हैं आप, ख़त्म हमारा सफ़र है आज ! !

हैवाँ ही सही

[दंगों में हिन्द-पाकिस्तान के शहर और क़स्बे]

हैवाँ ही सही, इन्साँ न सही !
भाई न सही, दुश्मन ही सही !
बोली तो समझ लोगे अपनी ?
यह शहर नहीं, अब बन ही सही !

हाँ 'हिन्दू धर्म' इसी में है !
'शाने-इस्लाम' इसी से है !
—नेता माउंटबैटन ही रहे !
काबा-काशी लन्दन ही सही !

टूटी हुई मस्जिद कहती थी
जल कर टूटे हुए मन्दिर से :
'तुम काल हुए तो संस्कृति के !
मज़हब के हम मदफ़न ही सही !'

जय हिन्द ! निहत्थों पर हमला !
बुज़दिल की छुरी—अल्लाह अकबर !
यों शम्र-ओ-शिखंडी के पर्दे में
साम्राज्य पुरफ़न ही सही !

जलते-जलते हम, काश !
जलाने वाले को भी जला सकते !
जो आग लगी है इस घर में
उस आग के हम ईंधन ही सही !

तिहास में अपने पहले कभी !
क्या कर्ण-ओ-हुसैन भी थे 'शमशेर' ?
इ पान ही थे शायद वो भी
इन्सान के हम दुश्मन ही सही !

बहुत सीधे-से प्रश्न

इक चीख़ है, इक शोर !
इक नशे का है दौर।
हाँ, जोश है सब ओर।
इन्सान था कुछ और
अब इन्सान है कुछ और।

यह चीख है दिल की...
या गला रेडियो का है ?
मैशीन है मिल की
कि नारा ये
खरी, सच्ची पार्टियों का है ?

एडीटरी जनता ने
सिखाई है कि तन्खाह ने ?
लेता है मेहनूताने
ये मुख्तार, कि है
क़ौम के वह दाहिने ?

नेता है कि अख़बार का
वह पहला सफ़ा है ?

वह भाव है बाज़ार का
या सिक्का मोहब्बत का
जो हर दिल पे गड़ा है ?

झंडे की तरह अपने
उड़ता है हवा में,
या त्याग ने, तप ने
दिल उसका उठाया
तो उठा हमको उठाने ?

गुस्सा तो बहुत है !
गर्मी तो बहुत है !
कुछ शर्म भी आती है
यह कहते कि—सच्चाई
है अपने ही बाँटे में
सब अपनी ही थाती है !

राजनीतिक करवटें, 1948

[बतर्ज़ कव्वाली]

हाय लीडर दुरंगी न कम गुम हुए ! !
बीच धारा अगम थी—गुड़म् गुम हुए ! !

'इन्क़लाबी' हमारे न कम गुम हुए :
लेके साइकिल हमारी निगम गुम हुए

हमने देखा था उनको इसी मोड़ पर !
एकदम आए वो ! एकदम गुम हुए ! !

ऐसे खोए गए जाके आफ़िस में हम :
अपने कानों पे रक्खे क़लम गुम हुए ! !

बोली बरसात में इन्क़लाबी दुल्हन :
'ले के छाता हमारा बलम गुम हुए !'

रक्खो एक्सौ-चवालिस दफ़ा फूँक-फूँक !
वर्ना रक्खा जो अगला क़दम, गुम हुए ! !

जैसे होश आज[1] बंगाल सरकार के;
हम तो ऐसे, तुम्हारी क़सम, गुम हुए !

ऐसी आँधी चले··· हम भी पूछें—कहाँ,
वो जो ढाते थे जुल्मो-सितम, गुम हुए ? ?

आ रहे हैं मसीह्-ओ-खिज़र झींकते :
हाय ! अब इन्क़लाबों में हम गुम हुए ! !

क्या गुरुजी मनुऽजी को ले आयँगे ?
हो गए जिनको लाखों जनम गुम हुए !

अपनी क़िस्मत को यों रो रहे हैं चियांग[2]—
रह गए हम लँडूरे, सनम गुम हुए !

किस एटम्गर से पूछे कि—इन्सान के
हीरोशिमा में कितने अटम गुम हुए ! ?

हमने ज़ेरे-ज़मीं[3], की तरक़्क़ी पसंद :
ले के शमशेर अपनी क़लम गुम हुए !

---

1. सन् 1948-49 के ज़माने में, 2. चियांग-काई-शेक, जिन्हें 1949 में फ़ारमूसा (ताइवान) में शरण लेनी पड़ी, 3. अर्थात् 'अंडर ग्राउंड'।

स्वर्गीया रज़िया सज्जाद ज़हीर[1]

रज़िया सज्जाद ज़हीर
कल थीं
आज नहीं हैं।
मगर
उनके अफ़सानों की तस्वीरें
देखो तो,
सब कहीं हैं—हमारे बीच
क़ीमती यादों की सूरत
ख़ामोश जागती···एक अजीब-सी,
मगर उदास नहीं,
तस्कीन की मूरत : गो
वो
सीधे—सामने बेतकल्लुफ़
मौजूद, गो नज़र न आएँ सब कहीं
बयकवक़्त मस्कवा, लन्दन, दिल्ली,
लखनऊ, हैदराबाद कि बम्बई···
जहाँ-जहाँ भी
हम उनके अफ़साने जिस किसी को भी
पढ़ते-सुनते पाएँ
वहाँ-वहाँ उतनी ही···उतनी

रज़िया आपाएँ
मुस्कराती हुईं, बेशक-ओ-बेगुमान : और
हमेशा यों ही, मौजूद !

मध्यवर्गी पीड़ा के इस हुस्न के अफ़साने
पढ़ने-सुनने वाले जब तक कि
इस जहाने फ़ानी में पाए जाएँगे,
और यह क़ीमती सर्माया
दूर-दूर तक ज़िन्दा है,
यह ख़ूबसूरत संजीदा इन्सान-दोस्त फ़न्कार
ज़िन्दा-ओ-पायिन्दा।[2]

1. स्व. रज़िया सज्जाद ज़हीर उर्दू की प्रसिद्ध कहानी लेखिका थीं, जिनकी रचनाएँ देश-विदेश की अनेक भाषाओं में अनूदित होती रहीं। वह प्रगतिशील लेखक संघ की नींव डालनेवाले प्रसिद्ध चिंतक-आलोचक स्व. सज्जाद ज़हीर की पत्नी और उनके संघर्षों की साथी थीं।
2. स्थायी रहनेवाला।

नाविक 'विद्रोहियों' पर बमबारी : बम्बई, 1946

[अल्जीरियाई वीरों को समर्पित, 1961]

लगी हो आग जंगल में कहीं जैसे,
हमारे दिल सुलगते हैं।

हमारी शाम की बातें
लिए होती हैं अक्सर ज़लज़ले महशर के; और जब
भूख लगती है हमें तब इन्क़लाब आता है।

हम नंगे बदन रहते हैं झुलसे घोंसलों से,
बादलों सा
शोर तूफ़ानों का उठता है—
डिवीज़न के डिवीज़न मार्च करते हैं,
नए बमबार हमको ढूँढ़ते फिरते हैं···

सरकारें पलटती हैं जहाँ हम दर्द से करवट बदलते हैं।
हमारे अपने नेता भूल जाते हैं हमें जब,
भूल जाता है ज़माना भी उन्हें, हम भूल जाते हैं उन्हें खुद।

और तब
इन्क़लाब आता है उनके दौर को गुम करने।

टूटी हुई, बिखरी हुई

टूटी हुई बिखरी हुई चाय
की दली हुई पाँव के नीचे
पत्तियाँ
मेरी कविता
बाल, झड़े हुए, मैल से रूखे, गिरे हुए, गर्दन से फिर भी चिपके
···कुछ ऐसी मेरी खाल,
मुझसे अलग-सी, मिट्टी में
मिली-सी

दोपहर-बाद की धूप-छाँह में खड़ी इन्तज़ार की ठेलेगाड़ियाँ
जैसे मेरी पसलियाँ···
खाली बोरे सूजों से रफ़ू किए जा रहे हैं···जो
मेरी आँखों का सूनापन हैं

ठण्ड भी एक मुस्कराहट लिए हुए है
जो कि मेरी दोस्त है।

कबूतरों ने एक ग़ज़ल गुनगुनाई···
मैं समझ न सका, रदीफ़-क़ाफ़िये क्या थे,

इतना ख़फ़ीफ़, इतना हलका, इतना मीठा
उनका दर्द था।

आसमान में गंगा की रेत आईने की तरह हिल रही है।
मैं उसी में कीचड़ की तरह सो रहा हूँ
और चमक रहा हूँ कहीं···
न जाने कहाँ।

मेरी बाँसुरी है एक नाव की पतवार—
जिसके स्वर गीले हो गए हैं,
छप्-छप्-छप् मेरा हृदय कर रहा है···
छप्-छप्-छप्।

वह पैदा हुआ है जो मेरी मृत्यु को सँवारने वाला है।
वह दूकान मैंने खोली है जहाँ 'प्वाइज़न' का लेबुल लिए हुए
दवाइयाँ हँसती हैं—
उनके इंजेक्शन की चिकोटियों में बड़ा प्रेम है।

वह मुझ पर हँस रही है, जो मेरे होठों पर एक तलुए
के बल खड़ी है
मगर उसके बाल मेरी पीठ के नीचे दबे हुए हैं
और मेरी पीठ को समय के बारीक तारों की तरह
खुरच रहे हैं
उसके एक चुम्बन की स्पष्ट परछाईं मुहर बनकर उसके
तलुओं के ठप्पे से मेरे मुँह को कुचल चुकी है
उसका सीना मुझको पीसकर बराबर कर चुका है।

मुझको प्यास के पहाड़ों पर लिटा दो जहाँ मैं
एक झरने की तरह तड़प रहा हूँ।
मुझको सूरज की किरनों में जलने दो—
ताकि उसकी आँच और लपट में तुम
फ़ौवारे की तरह नाचो।

मुझको जंगली फूलों की तरह ओस से टपकने दो,
ताकि उसकी दबी हुई ख़ुशबू से अपने पलकों की
उनींदी जलन को तुम भिगो सको, मुमकिन है तो।
हाँ, तुम मुझसे बोलो, जैसे मेरे दरवाज़े की शर्माती चूलें
सवाल करती हैं बार-बार···मेरे दिल के
अनगिनती कमरों से।

हाँ, तुम मुझसे प्रेम करो जैसे मछलियाँ लहरों से करती हैं
···जिनमें वह फँसने नहीं आतीं,
जैसे हवाएँ मेरे सीने से करती हैं
जिसको वह गहराई तक दबा नहीं पातीं,
तुम मुझसे प्रेम करो जैसे मैं तुमसे करता हूँ।

आईनो, रोशनाई में घुल जाओ और आसमान में
मुझे लिखो और मुझे पढ़ो।
आईनो, मुस्कराओ और मुझे मार डालो।
आईनो, मैं तुम्हारी ज़िन्दगी हूँ।

एक फूल ऊषा की खिलखिलाहट पहनकर
रात का गड़ता हुआ काला कम्बल उतारता हुआ
मुझसे लिपट गया।

उसमें काँटे नहीं थे—सिर्फ़ एक बहुत
काली, बहुत लम्बी जुल्फ़ थी जो ज़मीन तक
साया किए हुए थी···जहाँ मेरे पाँव
खो गए थे।

वह गुल मोतियों को चबाता हुआ सितारों को
अपनी कनखियों में घुलाता हुआ, मुझ पर
एक ज़िन्दा इत्रपाश बनकर बरस पड़ा—

और तब मैंने देखा कि मैं सिर्फ़ एक साँस हूँ जो उसकी
बूँदों में बस गई है।
जो तुम्हारे सीनों में फाँस की तरह ख़ाब में
अटकती होगी, बुरी तरह खटकती होगी।

मैं उसके पाँवों पर कोई सिजदा न बन सका,
क्योंकि मेरे झुकते न झुकते
उसके पाँवों की दिशा मेरी आँखों को लेकर
खो गई थी।

जब तुम मुझे मिले, एक खुला फटा हुआ लिफ़ाफ़ा
तुम्हारे हाथ आया।
बहुत उसे उलटा-पलटा—उसमें कुछ न था—
तुमने उसे फेंक दिया : तभी जाकर मैं नीचे
पड़ा हुआ तुम्हें 'मैं' लगा। तुम उसे
उठाने के लिए झुके भी, पर फिर कुछ सोचकर
मुझे वहीं छोड़ दिया। मैं तुमसे
यों ही मिल लिया था।

मेरी याददाश्त को तुमने गुनाहगार बनाया—और उसका
सूद बहुत बढ़ाकर मुझसे वसूल किया। और तब
मैंने कहा—अगले जनम में। मैं इस
तरह मुस्कराया जैसे शाम के पानी में
डूबते पहाड़ ग़मगीन मुस्कराते हैं।

मेरी कविता की तुमने ख़ूब दाद दी—मैंने समझा
तुम अपनी ही बातें सुना रहे हो। तुमने मेरी
कविता की ख़ूब दाद दी।

तुमने मुझे जिस रंग में लपेटा, मैं लिपटता गया :
और जब लपेट न खुले—तुमने मुझे जला दिया।
मुझे, जलते हुए को भी तुम देखते रहे : और वह
मुझे अच्छा लगता रहा।

एक ख़ुशबू जो मेरी पलकों में इशारों की तरह
बस गई है, जैसे तुम्हारे नाम की नन्हीं-सी
स्पेलिंग हो, छोटी-सी प्यारी-सी, तिरछी स्पेलिंग।

आह, तुम्हारे दाँतों से जो दूब के तिनके की नोक
उस पिकनिक में चिपकी रह गई थी,
आज तक मेरी नींद में गड़ती है।

अगर मुझे किसी से ईर्ष्या होती तो मैं
दूसरा जन्म बार-बार हर घंटे लेता जाता :
पर मैं तो जैसे इसी शरीर से अमर हूँ—
तुम्हारी बरकत !

बहुत-से तीर बहुत-सी नावें, बहुत-से पर इधर
उड़ते हुए आए, घूमते हुए गुज़र गए
मुझको लिए, सबके सब। तुमने समझा
कि उनमें तुम थे। नहीं, नहीं, नहीं।
उनमें कोई न था। सिर्फ़ बीती हुई
अनहोनी और होनी की उदास
रंगीनियाँ थीं। फ़क़त।

[1954]

कुछ और

कुछ शेर

जी को लगती है तेरी बात खरी है शायद
वही शमशेर मुज़फ़्फ़रनगरी है शायद

आज फिर काम से लौटा हूँ बड़ी रात गए
ताक़ पर ही मेरे हिस्से की धरी है शायद

मेरी बातें भी तुझे ख़ाबे-जवानी-सी हैं
तेरी आँखों में अभी नींद भरी है शायद !

× × ×

कोई तो साथ-साथ मेरी बेख़ुदी में था
मैं कैसे अपने होश में आया जवाब दो

उम्मीदे-वस्ल हो, कि बहाना हयात का
तुम मेरे दिल में हो, मेरे दिल का जवाब दो !

× × ×

तू मेरे एकान्त का एकान्त है
मैं समझता था कि मेरा तू नहीं।

× × ×

इश्क़ की इन्तहा तो होती है
दर्द की इन्तहा नहीं होती

× × ×

ख़याल भी है मेरा जिस्म, गो नहीं वह मैं
य ज़िन्दगी की है इक़ क़िस्म, गो नहीं वह मैं
जो होने-होने को हो, वो मैं हूँ—यक़ीन करो
ख़ुदा भी है मेरा ही इस्म—गो नहीं वह मैं

× × ×

कितने बादल आए, बरसे औ गए
जिनके नीचे मैं पड़ा सुलगा किया !
छिपके बैठे मेरे दिल की चोट में
आपने अच्छा किया, पर्दा किया
रुक गए हैं क्यों ज़मीनो-आसमाँ
कुछ कनखियों से इशारा-सा किया !

× × ×

कभी राह में योंहि मिल लेने वाले
बड़े आए हैं मेरा दिल लेने वाले

× × ×

चुपके चुपके उनसे मेरी चुग़लियाँ खाता रहा
आइने को पहले कितना बेज़बाँ समझा था मैं

× × ×

वफ़ा ख़ता थी, ख़ता मैंने ज़िन्दगी भर की।
अब इसके आगे जो मर्ज़ी हो बन्दापरवर की !

× × ×

इक् क़लम है और सौ मज़मून हैं
एक क़तरा ख़ूने-दिल तूफ़ान है।

× × ×

तुमसे बातें रात भर करता रहा;
यह न समझा दिल, कोई मेहमान है !

× × ×

अपनी मिट्टी को छिपाएँ आसमानों में कहाँ
उस गली में भी न जब अपना ठिकाना हो सका।

× × ×

वो एक शै कि जिसे दर्दे-दिल कहा जाए
ग़रीब ले के उसी को कहाँ समा जाए !

× × ×

अफ़साना वो क्या था–मैं भूल गया हूँ
कहते हैं, कि तू है : सुनता है मेरा दिल।

× × ×

मैं यहाँ तक भूल जाया जा सकूँ
एक आँसू में गिराया जा सकूँ
तुम न ऐसी ख़ाब-सी बातें करो
मैं भला तुमसे निभाया जा सकूँ

ग़ज़ल के शेर

हमारे ख़ूँ में वही लाल काम है आलम
तेरी निगाह में जो एक जाम है आलम

तेरी निगाह के पर्दों में वो भी छुप जाए
हमारे पहलू में जो बेनियाम है आलम

बदल रहा है बढ़ा जा रहा है तेज़ी से
अवाम वक़्त की रौ है, अवाम है आलम

न तेग़े-तेज़, न अब्रू का बल, मगर 'शमशेर'
हमारी ख़ाक़ के ज़र्रों का नाम है आलम

कुछ शेर

[जो एक शादी के मौक़े पर कहे गए]

गुलशन से जो इतराती आँगन में बहार आई
ख़ुशज़ौक़ दुल्हन उसकी शोख़ी को सँवार आई।

यह कौन निगार आया, फिर बाँगे-हज़ार आई
कलियों पे निखार आया, फूलों पे बाहर आई

फिर शोरे-अनादिल है, फिर गुंचे परीशाँ हैं :
ए बादे-सबा, लेकर क्या नामए-यार आई ?

हर एक शगूफ़ा यह कहता हुआ खिलता है।
"शायद कि बहार आई ! शायद कि बहार आई !"

[1945]

चार शेर

देख के अपनी बेक़सी किसलिए जी में हो खफ़ीफ़
मूनिस हमनवाँ मेरे बेहरो-क़वाफ़ियो-रदीफ़

आज वो हो चुका जो था आपका आशिक़ नज़ार
दौरे-जहाँ से उठ गया हुस्न का परतव लतीफ़

देखना दर पे कौन अभी देता हुआ सदा गया
और् काफ़िले-दर्द पर आपका दौलते-शरीफ़

भूल गए हम मगर क़ौलो-क़रार याद है
आह ज़माना भी है कुछ आप ही नहीं सितम ज़रीफ़

[1955]

तीन शेर

तुम से हासिल हयात की-सी तरह
ज़िन्दगी में सवाब की-सी तरह

साँस-सा तुमको खींचता हूँ मैं
अपने अन्दर शराब की-सी तरह

चाहता हूँ कि तुमसे कुछ पूछूँ
मुस्कराओ जवाब की-सी तरह।

तीन शेर

लिखा है मुक़द्दर में, दर-दर की दुआ माँगो।
सय्यार-ओ-मह्-ओ-मह्र-ओ अख़्तर की दुआ माँगो

इन्सान के पर्दे में रूठा है खुदा हमसे
इस घर की दुआ माँगो, उस घर की दुआ माँगो

फिर सुर्ख़ निशाँ बनकर, काँधे पे उठे तनकर
जो सर है हथेली पर, उस सर की दुआ माँगो

[1942]

कुछ शेर

जाओ जाओ तुम्हारी क़सम देख ली
अब आयन्दा हमें मुँह दिखाना नहीं

बात की आन क्या जब वो बातें नहीं
जब वो बानक नहीं, जब वो बाना नहीं।

तुमने शमशेर कैसी कही ये ग़ज़ल
दर्द तो ख़ूब है आशिक़ाना नहीं।

●●●